श्रेणी 1 के भारतीय इंजीनियरी संस्थानों के सामने आने वाले अवसर और बाधाएँ
Opportunities and Roadblocks Facing Tier I Indian Engineering Institutions

ई.सी. सुब्बाराव
E.C. Subbarao
8.3.09

भारत में भी दस से पंद्रह इंजीनियरी संस्थान अमरीका के बिग टैन और आईवी लीग की तरह ही श्रेष्ठ संस्थानों की श्रेणी में आते हैं. श्रेणी **1** के भारतीय संस्थान हैं **:** पुराने भारतीय इंजीनियरी संस्थान (IITs) और भारतीय विज्ञान संस्थान, बैंगलोर जैसे संस्थान. उसके बाद दूसरी श्रेणी के लगभग पचास कॉलेज आते हैं, जिनमें प्रमुख हैं, राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान (पुराने क्षेत्रीय इंजीनियरी कॉलेज) और कुछ पुराने क्षेत्रीय इंजीनियरी कॉलेज. तीसरी श्रेणी में वे हज़ारों कॉलेज आते हैं, जिनमें कुछ सरकार द्वारा वित्तपोषित हैं और अधिकांश निजी संस्थान हैं.

प्रत्येक श्रेणी के संस्थान की अपनी विशिष्ट भूमिका और दायित्व हैं. उदाहरण के लिए श्रेणी 2 और 3 के कॉलेजों से निकलने वाले इंजीनियर परमाणु ऊर्जा, अंतरिक्ष और रक्षा जैसे सरकारी विभागों में महत्वपूर्ण मिशनों को कार्यान्वित करते हैं. भारत में हर साल ढाई लाख स्नातक स्तर के इंजीनियर निकलते हैं. इनमें से क्रमशः पाँच हज़ार और पंद्रह हज़ार इंजीनियर श्रेणी 1 और 2 के संस्थानों से आते हैं और शेष इंजीनियर श्रेणी 3 के कॉलेजों से. निष्पक्ष प्रेक्षकों और सक्षम नियोक्ताओं द्वारा अक्सर कहा जाता है कि भारत में स्नातक होने वाले केवल दस प्रतिशत इंजीनियर ही इस लायक होते हैं कि उन्हें चुनौतीपूर्ण कार्यों में लगाया जा सके. यह बहुत गंभीर आक्षेप है. इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि विशेषकर श्रेणी 1 के संस्थानों का मूल्यांकन खास तौर पर किया जाए और इसके लिए तत्काल सुधारात्मक कार्रवाई भी की जाए, क्योंकि इनकी एक विशिष्ट भूमिका है और साथ ही समग्र इंजीनियरी शिक्षा प्रणाली को सुदृढ़ किए जाने की भी आवश्यकता है.

श्रेणी 2 की संस्थाओं में अनेक क्षमाताएँ होती हैं. प्रवेशार्थी छात्रों में जबर्दस्त गुणवत्ता होती है. चार लाख से अधिक छात्रों ने मई, 2009 में आयोजित भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान की संयुक्त प्रवेश परीक्षा (IITJEE) में भाग लिया था और दो प्रतिशत से भी कम परीक्षार्थियों को प्रवेश मिल पाया था. यदि तुलना की जाए तो हम पाएँगे कि सामान्यतः दस में से एक परीक्षार्थी ही विश्व के पश्चिमी भाग की प्रतिष्ठित संस्थाओं में प्रवेश पाने में सफल होता है. यदि हाई स्कूल के परीक्षा परिणामों को मिलाकर भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान की संयुक्त प्रवेश परीक्षा (IITJEE) को भारत के सभी इंजीनियरी संस्थानों का मुख्य प्रवेश बिंदु बना दिया जाए तो छात्र बहुत-सी परेशानी और खर्चे से बच जाएँगे.

श्रेणी I के संस्थानों के पाठ्यक्रम में विज्ञान, मानविकी और समाज विज्ञान का भी समावेश होने के कारण वे काफ़ी व्यापक होते हैं. पाठ्यक्रम भी निरंतर विकसित होता रहता है और इसके संकाय सदस्य भी ज्ञान के विस्फोट और बदलती हुई औद्योगिक आवश्यकताओं के अनुरूप इसकी आवधिक पुनरीक्षा करते रहते हैं. इन संस्थानों के संकाय-सदस्यों ने भी भारत और / विश्व भर की सर्वश्रेष्ठ संस्थाओं से एक या अधिक डिग्री ली होती हैं. इसलिए पाठ्यक्रम के निर्माण और अनुसंधान से संबंधित शैक्षणिक क्षेत्र में उनका सर्वश्रेष्ठ अनुभव होता है. भारतीय विश्वविद्यालयों में प्रचलित भाई-भतीजावाद इन संस्थाओं में न के बराबर है.

प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा राष्ट्रीय प्राथमिकता के अंतर्गत आती है. यही कारण है कि सरकार द्वारा इन क्षेत्रों में भारी निवेश किया जाता है. श्रेणी I की अधिकांश संस्थाओं का वित्तपोषण सरकार द्वारा उदारता से किया जाता है. यह लाभ सभी अन्य इंजीनियरी कॉलेजों को नहीं मिलता. साथ ही इन संस्थाओं की छवि बहुत बढ़िया होती है और यहाँ के छात्र भारी मात्रा में दान भी देते हैं. इसलिए कुछ मिलाकर इनकी संपदा अमूल्य होती है.

श्रेणी **1** की इन संस्थाओं के सामने अनेक अवसर और बाधाएँ भी होती हैं. ये संस्थाएँ श्रेणी II और III के कॉलेजों के लिए ठीक उसी तरह आदर्श होती हैं, जैसे एमआईटी, स्टैनफ़ोर्ड, कैलटैक, कैम्ब्रिज और ऑक्सफ़ोर्ड विश्व भर की संस्थाओं के लिए काफ़ी समय तक शैक्षणिक श्रेष्ठता के आदर्श रहे हैं. नए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों (IITs) को आरंभ से ही अध्यापन और अनुसंधान के क्षेत्र में श्रेष्ठता की वही संस्कृति विकसित करने का अच्छा अवसर मिलता है जो पुराने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों (IITs) को मिला करता था और इसका लाभ अमरीका, यू.के. जर्मनी और रूस की अग्रणी संस्थाओं के साथ सहयोग करने के लिए उठाते थे. श्रेणी II और III की संस्थाओं के अध्यापकों को विस्तारित गुणवत्ता सुधार कार्यक्रमों (QIP) के अंतर्गत डॉक्टरेट के लिए प्रतिनियुक्त किया जा सकता है ताकि वे यहाँ से इनका पाठ्यक्रम, शिक्षाशास्त्र और अनुसंधान की विशेषताओं को अपनी संस्था में ले जा सकें. इससे न केवल श्रेणी I के संस्थानों को अपेक्षित संख्या में स्नातकोत्तर छात्र मिल सकेंगे बल्कि श्रेणी II और III के संस्थानों को योग्य अध्यापकों की पूरी श्रृंखला का लाभ भी मिल सकेगा. सरकार के लिए विस्तारित गुणवत्ता सुधार कार्यक्रमों (QIP) में निवेश करना उपयोगी होगा. इससे सभी को लाभ ही लाभ है.

परंतु श्रेणी I की संस्थाओं के लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण और ध्यानाकर्षक मामले यही हैं कि इनमें संकाय सदस्यों, गुणवत्ता और मात्रा की दृष्टि से उन्नत अनुसंधान की कमी है और धीरे-धीरे स्वायत्तता भी घटने लगी है. सन् 2004 में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (IIT) के लिए गठित रामाराव पुनरीक्षण समिति ने इन संस्थानों में संकाय सदस्यों की भारी कमी की ओर

ध्यान आकृष्ट किया था. स्वीकृत संख्या (27 प्रतिशत के औसत के साथ) की तुलना में यह कमी 60 प्रतिशत की है. यह अनुमान प्रवेशार्थियों का नामांकन बढ़ने से पहले लगाया गया था. गुणवत्ता में किसी भी प्रकार का समझौता किए बगैर ही भारी संख्या में इनकी भर्ती करनी होगी. 1960 के दशक में पाँच भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों (IITs) ने अधिकतर विदेशों से प्रथम श्रेणी के संकाय सदस्यों को लेकर भारी संख्या में भर्ती कर ली थी. भावी संभावनाओं और चुनौतियों को देखते हुए अब भी यही किया जा सकता है. सुविधाओं में सुधार, स्थापित प्रतिष्ठा और विदेशों में विश्वविदयालयों की कमी के कारण अब यह और भी आसान है. क्षतिपूर्ति के पैकेजों में सुधार करके कम से कम श्रेष्ठतम अध्यापकों को तो प्रलोभन दिया ही जा सकता है. जे.सी. बोस स्कीम के अंतर्गत शीर्षस्थ अध्यापकों और अनुसंधानकर्मियों को आर्थिक अनुदान देना इस दिशा में सही कदम है. सर्वश्रेष्ठ अध्यापन के लिए आकर्षक नकदी पुरस्कार दिए जा सकते हैं, बढ़िया प्रकाशन, अनुसंधान और विकास के लिए अधिकतम अनुदान, स्पष्ट रूप में अधिकतम आय वर्ग और आंतरिक प्रतिस्पर्धा का वातावरण निर्मित किया जा सकता है. अन्य प्रोत्साहन भी दिए जा सकते हैं, जैसे, नौ वेतन-चैकों में वार्षिक वेतन, ग्रीष्मावकाश में भी अनुसंधान के लिए पूरक अनुदान, औद्योगिक सलाहकार का काम और विदेशों में नियुक्ति.

विदेशों की श्रेष्ठ संस्थाओं की तुलना में श्रेणी I की इन संस्थाओं में डॉक्टरेट स्तर का वर्तमान अनुसंधान गुणवत्ता और मात्रा की दृष्टि से महत्वपूर्ण अनुसंधान संस्थान के रूप में कहीं नहीं ठहरता. इस कमी की ओर भी गंभीरता से ध्यान देने की ज़रूरत है..यद्यपि स्नाकोत्तर स्तर के छात्र अत्यंत परिश्रमी होते हैं, फिर भी संकाय सदस्य उन्हें प्रेरित करने में असमर्थ रहते हैं. अकेले भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों (IITs) का पीएचडी का परिणाम प्रति वर्ष लगभग 0.3 प्रति संकाय सदस्य ही रहा है, जो इंजीनियरी विभागों के मुकाबले भी 0.2 से भी कम रहा है. भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (IIT),कानपुर ने अपने लगभग तीन सौ संकाय सदस्यों के साथ 2004 से 2008 तक क्रमशः पैंतालीस, इकसठ, बयालीस और एक सौ एक पीएचडी की उपाधियाँ ही दी हैं. अनुसंधान के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों में प्रति संकाय सदस्य एक पीएचडी की तुलना में यह अनुपात बहुत ही कम है. दुर्भाग्य की बात तो यह है कि कुछ संकाय सदस्य तो पूरे दशक में एक पीएचडी भी तैयार नहीं कर पाते. पीएचडी की संख्या में हर हाल में वृद्धि की जानी चाहिए, भले ही कतई कोई परिणाम न दिखाने वाले संकाय सदस्यों को या तो स्वैच्छिक रूप से विदा होना पड़े या फिर किसी और तरीके से उनसे पिंड छुड़ाया जाए. कुछ निकम्मे संकाय सदस्यों को कुछ समय के लिए विदेश के किसी अनुसंधानकर्ता विश्वविद्यालय में या फिर किसी औद्योगिक संस्थान में भेजकर उनकी बैटरी को रीचार्ज किया जा सकता है. इससे उनमें नए उत्साह का संचार हो सकेगा.

सरकार की उदारीकरण की नीतियों के कारण भारतीय उद्योग को प्रतियोगिता का दंश महसूस होने लगा है और वे एक ऐसे सार्थक प्रयास की आवश्यकता महसूस करने लगे हैं, जिससे नए उत्पादों के लिए उद्योगों के भीतर ही अनुसंधान व विकास के कार्य किए जा सकें और उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार के लिए निर्माण की नवोन्मेषकारी विधियों को विकसित किया जा सके, ऊर्जा और संयंत्रों के उपयोग में अधिक दक्षता लाई जा सके और उन्हें पर्यावरण के अनुकूल बनाया जा सके. जीई और जीएम जैसी बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के साथ-साथ वे तमाम छोटी, लेकिन प्रौद्योगिक दृष्टि से कहीं अधिक जागरूक कंपनियाँ भी बौद्धिक क्षमता और कम लागत का ध्यान रखते हुए भारत में ही अनुसंधान व विकास केंद्रों की स्थापना करने लगी हैं. इन सभी कार्यों से श्रेणी I की संस्थाओं के सुशिक्षित स्नातकोत्तर छात्रों के लिए चुनौतीपूर्ण अवसर और संभावनाओं के द्वार खुलने लगे हैं इसीसे भारत को वैश्विक ज्ञानपरक अर्थव्यवस्था में अपना उचित स्थान प्राप्त हो सकेगा.

पिछले कुछ वर्षों में इन उच्च संस्थाओं की स्वायत्तता में कमी होने लगी है, चाहे फिर वह छात्रों के प्रवेश में कोटे का सवाल हो या संकाय-सदस्यों की भर्ती हो या फिर छात्रों की दानराशि का मामला हो. किसी भी लोकतंत्र में समान अवसर और समानता अनिवार्य तत्व हैं और साथ ही गुणवत्ता के लिए प्रतिबद्धता भी आवश्यक है. गुणवत्ता के प्रति आग्रह स्कूल से ही शुरू हो जाना चाहिए ताकि समान अवसर स्वाभाविक रूप में ही पैदा होने लगें. एक ऐसी परिषद का गठन किया जाना चाहिए जिसमें इन श्रेष्ठ संस्थाओं के अध्यक्षों और निदेशकों के अलावा उद्योग और वैज्ञानिक संस्थाओं के कुछ नेताओं को भी सहयोजित किया जाए, लेकिन सरकार का प्रतिनिधित्व कम से कम हो. इस परिषद का काम होगा, श्रेणी I की इन संस्थाओं को अंतर्राष्ट्रीय स्तर की संस्थाओं के रूप में विकसित करने के लिए आवश्यक मार्गदर्शन प्रदान करना.

ई.सी. सुब्बाराव भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान,कानपुर के संकाय के पहले डीन थे और उसके बाद टाटा अनुसंधान विकास व डिज़ाइन केंद्र, पुणे के संस्थापक निदेशक रहे.